ओ३म्

–ईश्वर सहित सभी ऋषि वेद प्रचारक रहें हैं–

‘महर्षि दयानन्द का वेद प्रचार ब्रह्मा से जैमिनी मुनि पर्यन्त प्रचलित वेद प्रचार परम्परा का ही निर्वाह’

–मनमोहन कुमार आर्य, देहरादून।

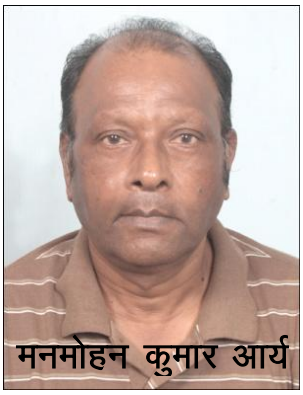

कल्प के आरम्भ से पूर्व ईश्वर ने प्रलय अवस्था को समाप्त कर सत्, रज व तम गुणों वाली प्रकृति के सूक्ष्म कणों से पूर्व कल्प के सदृश्य इस सृष्टि का निर्माण किया तथा जीवात्माओं को उनके पूर्व कल्प में पुण्य व पाप कर्मों के कर्माशय के अनुसार मनुष्य व अन्य प्राणी योनियों में जन्म दिया। मनुष्यों को ज्ञान की आवश्यकता थी, अतः परमात्मा ने अपने मनुष्योचित ज्ञान ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद व अथर्ववेद को आदि चार अग्नि, वायु, आदित्य व अंगिरा नामी ऋषियों को दिया। यह चार ऋषि पूर्व कल्प के चार सबसे अधिक पवित्रात्मा मनुष्य थे। ईश्वर प्रदत्त इस वेदज्ञान से मनुष्य, सृष्टि के आरम्भ से ही, ज्ञान सम्पन्न होकर वेद–आज्ञानुसार जीवन व्यतीत करता रहा। **इस प्रकार आदि चार ऋषियों को वेदों का ज्ञान देने से ईश्वर को वेदों का प्रचारक कहा जा सकता है। वेद प्रचारक का अर्थ सत्य ज्ञान का प्रचार करने वाला होता है और वह सर्वप्रथम ईश्वर ही है।** सृष्टि में देखने में आता है कि सभी मनुष्य समान रूप से ज्ञानी नहीं हो सकते। अतः ईश्वर ने प्रथम चार सबसे अधिक पवित्र ऋषियों की आत्माओं में वेदों का ज्ञान दिया और उन पर प्रेरणा द्वारा यह उत्तरदायित्व सौंपा कि वह वेदों का ज्ञान ब्रह्मा जी को दें और यह सब मिल कर इस ज्ञान को अन्य सभी स्त्री व पुरूषों सहित आगामी पीढ़ी दर पीढ़ी सौंपते जायें। **यहीं से मनुष्यों वा ऋषियों द्वारा वेदाध्ययन व वेद प्रचार का शुभारम्भ सृष्टि के आरम्भ में ही हो गया था। आदि चार ऋषियों तथा ब्रह्मा जी का मुख्य कार्य वेदों का प्रचार करना ही था।** वेदों के प्रचार के लिए सबसे प्रथम कर्तव्य मनुष्य की सन्तानों को आचरण व व्यवहार सहित ओ३म् का उच्चारण एवं अर्थ सहित गायत्री मन्त्र सीखाना होता है। इसके पश्चात सन्तानों के 8 वर्ष व कुछ अधिक आयु में गुरूकुल में आचार्य व आचार्याओं के पास भेजकर उन्हें वर्णमाला का ज्ञान कराकर व्याकरण आदि ग्रन्थों पढ़ाया जाता है। **इस प्रकार उत्तरोत्तर अध्ययन करते हुए वेदों का अध्ययन कराना ही वेदों का प्रचार है। इस प्रकार गुरूकुलों के सभी आचार्य व आचार्यायें भी एक प्रकार से वेद प्रचारक ही होते थे। बालक बालिकाओं के अतिरिक्त समाज के युवा व प्रौढ़ आयु के वेद ज्ञान विहीन लोगों को उपदेश व सत्यार्थ प्रकाश के समान पुस्तकों के द्वारा ज्ञान प्रदान करना भी वेद प्रचार ही है। महर्षि दयानन्द ने अपने समय में इन दोनों प्रकारों से लोगों को वेदों का ज्ञान कराया।**

उपलब्ध वैदिक साहित्य के आधार पर यह पता चलता है कि सृष्टि के आरम्भ से महाभारत काल पर्यन्त जो वर्तमान समय से 5,240 वर्ष पूर्व हुआ था, ऋषि परम्परा से वेदों का प्रचार–प्रसार देश व विश्व में सामान्य रूप से चलता रहा। इस वेद प्रचार का ही परिणाम था कि सारे संसार में एक ही मत वा धर्म अर्थात् वेद–वैदिक धर्म ही सर्वत्र प्रचलित था। महाभारत युद्ध में सभी देशों के सैनिकों ने युधिष्ठिर व दुर्योधन के पक्ष में भाग लिया जिससे जान व माल की भारी क्षति हुई। इस महाभारत युद्ध से आर्यावर्त्त–भारत व विश्व के अन्य सभी देशों में शिक्षा व्यवस्था अर्थात् वेदाध्ययन बाधित हुआ और ऋषि परम्परा समाप्त होकर अविद्या व अज्ञान का विस्तार होने लगा। ऋषि परम्परा के अवरुद्ध होने से वेद प्रचार व वेदाध्ययन बन्द हो गया जिसका परिणाम यह हुआ कि अज्ञान व स्वार्थवश लोगों ने वैदिक मान्यताओं को तोड़ा–मरोड़ा जिससे अवैदिक व वेद विरूद्ध

मान्यताओं का प्रचार–प्रसार होने लगा और कुरीतियों का विस्तार होने लगा। इस अज्ञान व कुरीतियों के कारण देश विदेश में मूर्तिपूजा, अवतारवाद, मृतक श्राद्ध, फलित ज्योतिष, सामाजिक विषमता, जन्मना जातिप्रथा आदि कुरीतियां उत्पन्न हो गईं। यद्यपि महाभारत काल के बाद देश में महात्मा बुद्ध, महावीर स्वामी, स्वामी शंकराचार्य आदि अनेक आचार्य हुए परन्तु वह सत्य वेदार्थ को प्राप्त करने में कृतकार्य न हो सके जिसका परिणाम यह हुआ कि अविद्या का प्रसार होता रहा। इसी के परिणामस्वरूप देश पराधीन भी हुआ और अनेक मत–मतान्तर देश व विश्व में उत्पन्न हुए जिनसे मनुष्य ईश्वर की प्राप्ति व धर्म–कर्म से दूर होता गया और धर्म–कर्म के स्थान पर मिथ्या विश्वासों के जाल में फंसता गया। ऐसा होते होते–सन् 1825 का आंग्ल वर्ष आ गया।

12 फरवरी 1825 को गुजरात प्रान्त के राजकोट नगर से लगभग 50 किमी. दूरी पर टंकारा नाम के ग्राम में एक ब्राह्मण परिवार में एक बालक का जन्म हुआ जिसे माता–पिता ने मूलशंकर नाम दिया। यही बालक बाद में महर्षि दयानन्द के नाम से प्रसिद्ध हुआ। महर्षि दयानन्द ने अपने गुरू प्रज्ञाचक्षु दण्डी स्वामी

विरजानन्द सरस्वती की प्रेरणा व आज्ञा से वेद प्रचार को ही अपने जीवन का लक्ष्य बनाया। वेद प्रचार के अन्तर्गत उन्होंने देश भर में घूम–घूम कर वेदों वा वैदिक धर्म का प्रचार किया और अवैदिक असत्य व अज्ञान पर आधारित मान्यताओं का खण्डन किया। खण्डन की गई मान्यताओं में मूर्तिपूजा, अवतारवाद, मृतक श्राद्ध, फलित ज्योतिष, बेमेल विवाह, बाल विवाह व तर्क व युक्ति रहित मत–मतान्तरों की अन्य अनेक मान्यतायें थीं। असत्य के खण्डन के कार्य में केवल पौराणिक सनातन धर्म ही नहीं था अपितु संसार के सभी मत, सम्प्रदाय, पन्थ व मजहब आदि थे। उन्होंने वेदों व धर्म का सत्य स्वरूप जहां अपने मौखिक व्याख्यानों, वार्तालापों, शास्त्रार्थों आदि में प्रस्तुत किया, वहीं उन्होंने सत्यार्थ प्रकाश, ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका, संस्कार विधि, आर्याभिविनय आदि ग्रन्थ लिख कर भी वैदिक ज्ञान का प्रकाश व प्रचार किया। वह शायद ऐसे प्रथम धार्मिक महापुरुष हैं जिन्होंने वेदों व उनकी विरोधी मान्यताओं के खण्डन में कही व लिखी गई अपनी मान्यताओं को मौखिक व ग्रन्थ रूप में लिखकर प्रस्तुत किया। वह सभी मत–मतान्तरों के आचार्यों व विद्वानों से शास्त्रार्थ करने के लिए सदैव तत्पर रहते थे और स्वयं भी आमन्त्रण व चुनौती देते थे। यही काम अपने–अपने समय में स्वामी शंकराचार्य जी और अन्य मत प्रवतर्कों व उनके प्रचारकों ने भी किया। बड़ी संख्या में उन्होंने विभिन्न मतों के आचार्यों से शास्त्रार्थ व शास्त्रार्थ चर्चायें कीं जिनका परिणाम सदैव उनके पक्ष में ही रहा। वह पहले ऐसे महा–ऋषि थे जिन्होंने वैदिकधर्म के द्वार संसार के सभी मनुष्यों अर्थात् मतावलम्बियों के लिए खोले। जो व्यक्ति वैदिक धर्म में आना चाहता था उसका स्वागत किया। देहरादून में जन्म से मुस्लिम मोहम्मद उमर नामक एक मुस्लिम परिवार की उसके निवेदन करने पर उसकी शुद्धि कर उसे वैदिक धर्म में दीक्षित किया और उसे अलखधारी नाम दिया। यह व्यक्ति सारा जीवन आर्यधर्म में रहा और वैदिक आचरण करता रहा। पूर्व मत वा धर्म के इस अलखधारी बन्धु को जिन लोगों ने हतोत्साहित किया था उनका भी उत्तर इस व्यक्ति ने अपने ज्ञान व विवेक तर्क व प्रमाणों से दिया जिससे सबके मुंह बन्द हो गये थे।

महर्षि दयानन्द को देख कर हमें ज्ञात होता है कि उनका मुख्य कार्य वेदों के सत्य अर्थों से संसार के सभी लोगों को परिचित कराना। इसके लिए उन्होंने सत्यार्थप्रकाश, ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका आदि अनेक ग्रन्थ लिखे और मौखिक प्रचार भी किया। **यही बात हम सृष्टि के आरम्भ में महाभारत काल तक हुए सभी ऋषियों में देखते है। यह सभी ऋषि ब्रह्मचारियों को वेद का ज्ञान पढ़ाया करते थे, आवश्यकतानुसार ग्रन्थ लिखा करते थे तथा मौखिक प्रचार व शास्त्रार्थ आदि किया करते थे। इनके इन कार्यों के कारण देश व विश्व में कहीं कोई अवैदिक मत व पन्थ सिर नहीं उठाता था। इसका प्रमाण है कि महाभारत काल तक संसार में केवल एक मत वैदिक धर्म ही था।** महर्षि वेदव्यास व महर्षि जैमिनी के युग में इस ऋषि–परम्परा का अन्त होने पर सर्वत्र अज्ञान का अन्धकार छा गया। देश व संसार में अनेक अवैदिक मत उत्पन्न हुए जिनका मुख्य कारण अज्ञान था। इन मतों के अनुयायियों व प्रवतर्कों में ऐसा कोई मनुष्य नहीं था

जो वेदों का ज्ञानी रहा हो और जो सभी मत प्रवतर्कों व आचार्यों को उचित परामर्श देकर मतों की अज्ञान व अन्धविश्वासपूर्ण मान्यताओं को दूर कराता। **यह कार्य महर्षि दयानन्द जी ने किया जिससे वह एकमात्र ईश्वरीय दूत सिद्ध होते हैं क्योंकि उन्होंने अपने सम्मान, प्रशंसा, लोकैषणा व वित्तैषणा से प्रभावित होकर यह कार्य नहीं किया अपितु लोकोपकार की भावना से प्रेरित होकर किया। ईश्वर दूत शब्दों के प्रयोग का यह अर्थ कदापित नहीं है कि दयानन्द जी कोई विशिष्ट आत्मा थे। दयानन्द जी व सभी मनुष्यों की आत्मायें यहां तक की पशु व पशुओं की आत्मायें भी एक समान हैं परन्तु ज्ञान व कार्य की दृष्टि से उन्हें ऋषि वा ईश्वर का वेदसन्देश संसार में प्रकाशित करने के कारण सच्चा दूत कहा है।** उन्होंने ऐसा कोई कार्य नहीं किया जो उनके अपने अनुयायियों व देश के हित में हो व अन्य देशवासियों का अहित होता हो जैसा कि आजकल के प्रायः सभी मत हैं जो स्वहित को महत्व देते हैं और परहित की हानि भी करते हैं। अतः ईश्वर से आरम्भ वेदज्ञान व वेद प्रचार की परम्परा जो ऋषियों के माध्यम से महाभारतकाल व कुछ बाद तक चली, उसी परम्परा को उन्होंने पुनर्जीवित किया। **हम उनके द्वारा प्रदत्त वैदिक ज्ञान की निष्पक्ष आधार पर विवेचना करने पर यह पाते हैं कि आज विश्व में सत्य व सर्वांगपूर्ण एक ही मत है और वह वेद मत व महर्षि दयानन्द द्वारा प्रचारित वैदिक धर्म ही है। सभी मतों की अच्छी बातों का इसमें समावेश है और जिन बातों का समावेश नहीं हो सका उसका कारण उनका सत्य न होना है। यहां यह भी उल्लेख कर देते हैं कि वेद प्रचार का मुख्य उद्देश्य व अर्थ संसार के लोगों को श्रेष्ठ गुण–कर्म–स्वभाव व विचारों वाला, वैदिक भाषा में इसे ही 'आर्य' कहते हैं, बनाना है। यही कार्य मनुष्यों की इहलोक व परलोक में उन्नति का कारण होने से विश्व शान्ति का आधार भी है।**

हम यह भी कहना चाहते हैं कि वेद प्रचार ही संसार में सभी मनुष्यों का एकमात्र सच्चा मानव धर्म है जो सभी के लिए माननीय व आचरणीय है। इसलिए महर्षि दयानन्द ने यह नियम दिया कि वेद सब सत्य विद्याओं का पुस्तक है और वेदों का पढ़ना–पढ़ाना और सुनना–सुनाना सभी मनुष्यों व श्रेष्ठ मानवों अर्थात् आर्यों का परम धर्म है। सत्य को ग्रहण करने और असत्य को छोड़ने में सर्वदा उद्यत रहना चाहिये। प्रत्येक काम सत्य और असत्य को विचार करके करने चाहिये। सभी सज्जन पुरूषों की रक्षा, उन्नति और उनके प्रति प्रियाचरण और दुष्टों के बल की हानि, उनका नाश, अवनति और उनसे अप्रियाचरण सभी मनुष्यों को करना चाहिये। ऐसा करने से ही मनुष्य, मनुष्य कहलाता है अन्यथा महर्षि दयानन्द की दृष्टि में वह मनुष्य नहीं कहला सकता। **हम समझते हैं कि सभी पाठक हमारे इस विचार से सहमत होंगे कि ईश्वर से लेकर महर्षि दयानन्द तक हुए सभी ऋषि वेद प्रचारक ही थे।** वेदों के ज्ञान की उच्चता या पराकाष्ठा एवं सिद्ध योगी होने के कारण ही सृष्टि के आरम्भ से मनुष्य ऋषि व महर्षि कहलाते थे। देश व विश्व में सच्चे अर्थों में शान्ति तभी हो सकती है जब कि सारी मनुष्य–जाति असत्य को त्याग कर सत्य मत वेदों को अपने जीवनयापन का आधार बनाये। वेदों का सत्य स्वरूप महर्षि दयानन्द ने अपने ग्रन्थों व वेदभाष्य में प्रस्तुत किया है तथा आर्य विद्वानों के वेदभाष्यों में भी प्राप्तव्य है। यह ज्ञान व विचार वहीं हैं जो सृष्टि के आदि काल से महाभारत काल तक विश्व भर में धर्म के रूप में प्रचलित रहे हैं। इसी के साथ इस लेख को विराम देते हैं।

–मनमोहन कुमार आर्य
पताः 196 चुक्खूवाला–2
देहरादून–248001
फोनः09412985121